# भारत की विदेशी नीति घटक : एक विवेचना

*डॉ. जनक सिंह मीना
**सुरेन्द्र सिंह चौधरी

**शोध सारांश**

भारत की विदेश नीति के बारे में हम जो पढ़ते हैं, उसमें सबसे पहला सवाल हमारे जेहन में यही आता है कि – वे कौन से कारक, तत्व या घटक हैं, जो भारत की विदेश नीति को प्रभावित करते या निर्धारित करते हैं? या ऐसे कौनसे तत्व या कारक है, जिनके कारण भारत की विदेश नीति ने अपनी विदेश नीति इस तरीके की बनाई है? वैसे अनेक तत्व हैं जो भारत की विदेश नीति को निर्धारित करते हैं परन्तु यहाँ पर हम प्रमुख तत्वों का उल्लेख करेंगे जो किसी भी देश की विदेश नीति निर्धारण में अपनी अहम भूमिका निभाते हैं – उनमें सर्वप्रथम हम उस देश की भौगोलिक स्थिति, आपसी गुटबंदिया, सैनिक तत्व, विचारधाराओं का प्रभाव, आर्थिक तत्व, राष्ट्रीय हित, नेहरू का व्यक्तित्व, ऐतिहासिक परम्पराएँ, अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों पर विश्वास, सामाजिक प्रारूप, आन्तरिक शक्तियों और दबावों का प्रभाव आदि को रख सकते हैं जिनका विस्तृत वर्णन निम्नानुसार किया जा रहा है–

**भौगोलिक तत्व**

किसी भी देश की विदेश नीति के निर्माण में उस देश की भौगोलिक परिस्थितिया प्रमुख और निर्णायक महत्व की होती हैं। भारत में भौगोलिक तत्वों के वितरण और इसके प्रतिरूप से है जो लगभग हर दृष्टि से काफी विविधतापूर्ण है। दक्षिण एशिया के तीन प्रायद्वीपों में से मध्यवर्ती प्रायद्वीप पर स्थित यह देश अपने 32, 87, 263 वर्ग किसी क्षेत्रफल के साथ विश्व का सातवां सबसे बड़ा देश है। साथ ही लगभग जनसंख्या में चीन के बाद दूसरा बड़ा देश है। भारत के पड़ोसी देशों से लगने वाली सीमा जो अफगानिस्तान से 106 किमी, चीन से 3488 कि.मी., पकिस्तान से 3323 किमी. नेपाल से 175 किमी. वर्मा से 1643 किमी. एवं भूटान से 699 किमी. अर्थात् कुल स्थलीय सीमा की लम्बाई 15200 किमी जो सात पड़ोसी देशों के साथ लगती है।

भारत की विदेश नीति के निर्धारण में भौगोलिक परिवेश की महती भूमिका है। इस संदर्भ में नेपोलियन बोनापार्ट ने भी कहा था कि – ''किसी देश की विदेश नीति उसके भौगोलिक परिवेश द्वारा निर्धारित होती है।''[1]

इसी प्रकार के. एम. पणिक्कर ने विदेश नीति के निर्धारण में भौगोलिक तत्व को प्रमुखता की दृष्टि से देखा है उन्होंने लिखा है कि – ''यह समझना कठिन नहीं है कि भूगोल (भौगोलिक परिवेश) का सुरक्षा से कितना गहरा संबंध है। चूंकि हर देश की भौगोलिक विशेषताओं में मूलतः कोई परिवर्तन नहीं आता, इसलिए प्रत्येक देश की वैदेशिक नीति के कुछ स्थायी पहलू होते हैं। वास्तव में यह कहना ओतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि वैदेशिक नीति भूगोल द्वारा निर्धारित होती है।''[2]

भारत की विदेश नीति के निर्धारण में भारत में आकार, स्थलीय आकृति, एशिया में उसकी विशेष स्थिति तथा दूर–दूर तक फैली हुई, भारत की सामुद्रिक और पर्वतीय सीमाओं का विशेष स्थान रहा है। जहाँ भारत एक ओर पाकिस्तान से सीमा साझा करना है तो वही दक्षिणी छोर समुद्रों से घिरा है जो मुख्य है शीतयुद्ध की राजनीति से

दूर रहना। दूसरे शब्दों में असंलग्नता का अर्थ एक स्वतंत्र नीति का अनुसरण एवं पालन करना।''[3] वैसे यह नीति द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति अर्थात् सन् 1945 ई. के पश्चात् दो महाशक्तियों रूस व अमेरिका के मध्य शीतयुद्ध की राजनीति के परिणाम स्वरूप भारतीय विदेश नीति का प्रमुख तत्व थी जिनसे भारतीय विदेश नीति को विश्व में पहचान दिलाने एवं शांति व्यवस्था एवं निःशस्त्रीय भाषा हेतु अहम भूमिका अदा की ।

### गुटबन्दिया

जब भारत स्वतंत्र हुआ तो सारा संसार दो गुटों में विभाजित था। अमरीका और सोवियत संघ। इन दोनों में इतना मनमुटाव था कि जिसका परिणाम शीतयुद्ध के रूप में परिवर्तित हो गया। अब ऐसी स्थिति में प्रश्न उठता है कि भारत विश्व राजनीति में क्या कर सकता है? या तो वह दोनों गुटों में किसी एक तरफ शामिल हो या अपनी कूटनीतिज्ञता से तटस्थ रहकर इन वैश्विक शक्तियों के मध्य अपनी विदेश नीति को गुटों से पृथक रहकर अपनी स्वतंत्र छवि अथात् तटस्थता की नीति का पुरजोर समर्थन कर मध्यस्थता की अहम भूमिका निभा सके।

भारत ने ठीक दोनों गुटों से अलग रहकर इन दोनों गुटों के मध्य सेतुबन्ध का कार्य किया। इस बात की पुष्टि हेतु इन पंक्तियों से स्पष्टता से समझ जा सकता है – ''भारत विश्व के किसी भी गुट के साथ रह सकता था। भारत को कोई नुकसान नहीं था। उनका हित दोनों गुटों के मध्य तनाव में कमी होने में निहित है।''[4] भारत द्वारा तटस्थता और असंग्लनता की नीति अपनाने का प्रधान कारण यही है कि विश्व के दोनों गुटों में से किसी के भी साथ न बंधने से भारत को कोई हानि नहीं है। उसका हित दोनों गुटों के मध्य तनाव में कमी होने में निहित था। क्योंकि एक विश्व–युद्ध भारतीय अर्थव्यवस्था को अस्त–व्यस्त कर देता अर्थात् उसके सर्वांगीण विकास हेतु बाधक हो सकता था। इसलिए भारत ने स्वतंत्र अपनी मध्यस्तता की नीति को अपनाने हेतु अभूतपूर्व भारतीय विदेश नीति के इस प्रमुख तत्व को चुना जो आगे चलकर भारत का संसार के किसी भी गुट में शामिल नहीं हुआ और उन्होंने विश्व राजनीति में अपनी अमिट छाप छोड़ी है।

### सैनिक तत्व

किसी भी देश की विदेश नीति निर्धारण में उस देश की सैनिक शक्ति का अहम् भूमिका होती है। इस दृष्टि से देखा जाए तो भारत सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली राष्ट्र नहीं था। अपनी रक्षा के लिए अनेक दृष्टियों से वह पूरी तरह विदेशों पर निर्भर था। लड़ाकू विमानों या अत्याधुनिक संसाधनों पर हमेशा किसी न किसी देश के साथ इन्होंने सौदा किया है। इस बात की पुष्टि हेतु इन पंक्तियों का सहारा लिया जा सकता है – ''भारत की दुर्बल सैनिक स्थिति उसे इस बात के लिए बाध्य करती रही कि विश्व की सभी महत्वपूर्ण शक्तियों के साथ मैत्री बनाये रखी जाए।''[5] भारत की विदेश नीति के निर्धारक तत्वों में सैनिक शक्ति की अहम् भूमिका रहती है। आज भारत भले ही विश्व के अलग–अलग देशों से रक्षा सौदा कर कुछ हद तक आत्मनिर्भर की स्थिति तक पूर्णरूपेण नहीं पहुँच पाया है, फिर भी आज स्थिति काफी हद तक अच्छी कही जा सकती है। फ्रांस से राफेल लड़ाकू विमान का सौदा भारत की दूसरे देशों पर निर्भरता का उदाहरण आज हमारे सामने ताजा उदाहरण है।

### पं. जवाहरलाल नेहरू का व्यक्तित्व

भारतीय विदेश नीति के निर्धारण में नेहरू जी के व्यक्तित्व को नहीं भुलाया जा सकता है। वैसे भी वे भारत के प्रथम प्रधानमंत्री एवं विदेशमंत्री रहे हैं। उनके व्यक्तित्व की छाप भारत की विदेश नीति निर्धारण में हर पहलू पर झलकती देखी जा सकती है। इस बात की पुष्टि हेतु इन पंक्तियों लिखा जा सकता है यथा – ''वे साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद और फासिस्टवाद के प्रबल विरोधी थे। वे सभी अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को शान्तिपूर्ण उपायों से सुलझाने

के प्रबल समर्थक थे। वे महाशक्तियों के संघर्ष में भारत के लिए असलंग्नता की नीति को सर्वोत्तम मानते थे।''[6] अर्थात् नेहरू जी ने अपने स्वच्छ विचारों या कहें कि अपनी प्रबल प्रतिभा से भारतीय विदेश नीति अपने विचारों एवं भारतीय परिवेश के अनुकूल ढालने का अथक एवं सहारनीय कार्य किया है। आज भारतीय विदेश नीति का जो स्वरूप हमें देखने को मिलता है उसमें नेहरू जी के व्यक्तित्व की अहम् भूमिका है। परन्तु उच्च कोटि अर्थात् अटूट प्रतिभा सम्पन्न नेहरू जी स्वयं मानते थे कि स्वयं की कोई मेरी नीतियों को भारत की विदेश से संबंध तो अवश्य कर सकते हैं परन्तु उसे सर्वथा नेहरू नीति कहना सर्वथा भ्रांतिपूर्ण लगता है – इस संदर्भ में उनके स्वयं के विचार इस प्रकार थे – ''भारत की विदेश नीति को नेहरू नीति कहना सर्वथा भ्रांतिपूर्ण है। यह इसलिए गलत है कि मैंने केवल इस नीति का शब्दों में प्रतिपादन किया है, मैंने इसका आविष्कार नहीं किया। यह भारतीय परिस्थितियों की उपज है। वैयक्तिक रूप से मेरा यह विश्वास है कि भारत के वैदिशिक मामलों की बागडोर यदि किसी अन्य व्यक्ति या दल के हाथ में होती तो उसकी नीति वर्तमान नीति से बदल भिन्न न होती।''[7] भले ये बात नेहरू बिल्कुल स्वीकार न करें परन्तु भारतीय विदेश नीति के निर्धारण में उनके व्यक्तित्व, आचार–विचार एवं इनकी सन्तुलित सोच ने कहीं न कहीं विदेश नीति निर्धारण के लिए अहम् भूमिका अदा की है। इसका पता हम प्रो. सच्चिदानन्द मूर्ति की इन पंक्तियों से लगा सकते हैं – ''राष्ट्र का नेतृत्व नेहरू के हाथों में नहीं होता तो दूसरे प्रकार की विदेश नीति की पर्याप्त सम्भावना थी, जैसा कि कुछ दूसरे दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों और पाकिस्तान के उदाहरण से भी स्पष्ट है जिन्होंने भिन्न विदेश नीतियाँ अपनाई थी।''[8] कहने का तात्पर्य यही है कि भारतीय विदेश नीति के निर्धारक तत्वों में इनके व्यवहार, कूटनीतिज्ञ सोच एवं सारगर्भित विचारों ने इस देश की विदेश नीति हेतु बीज की तरह कार्य किया है।

- **राष्ट्रीय हित** – वैसे भारत की विदेश नीति दूसरे अन्य देशों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप के विरूद्ध है, परन्तु अपने राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुए ही भारत ने अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप की भर्त्सना नहीं की। इसके पीछे अनेक कारण रहे होंगे। फिर भी कुछ भी रहा होगा परन्तु भारत के संदर्भ में देखा जाए तो भारत के दो प्रकार के राष्ट्रीय हितों की बात की जा सकती है– स्थायी राष्ट्रीय हित एवं अस्थायी राष्ट्रीय हित। इस संदर्भ में भारतीय संविधान में वक्तव्य देते हुए प. नेरूह ने विदेश नीति के संबंध में अपने विचार स्पष्ट करते हुए कहा कि – ''किसी भी देश की विदेश नीति की आधारशिला उसके राष्ट्रीय हित की सुरक्षा होती है और भारत की विदेश नीति का ध्येय यही है।''[9] वैसे नेहरू विश्व की जटितम समस्याओं से भंति–भाँति थे। वे एक ऐसी विश्व व्यवस्था की स्थापना करना चाहते थे जो शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व के सिद्धान्त पर आधारित हो जैसा उपर्युक्त में कहा गया है कि भारतीय विदेश नीति के दो निर्धारक राष्ट्रीय हित प्रमुख हैं जिनके सहारे हम राष्ट्रीय महत्व के विषय एवं हमारी विदेश नीति सामंजस्य को भली प्रकार समझ सकते हैं। इन दो राष्ट्रीय हितों में पहला है – स्थायी राष्ट्रीय हित एवं दूसरा है – अस्थायी राष्ट्रीय हित। जैसे देश की सुरक्षा व्यवस्था, अखण्डता आदि स्थायी राष्ट्रीय हितों के अंतर्गत समाहित हैं, वहीं दूसरी ओर अस्थायी राष्ट्रीय हितों के अन्तर्गत उन सामरिक महत्व के विषयों को रखा जा सकता है, जिनमें खाद्यान्न, विदेशी पूँजी, तकनीकी विकास, संचार माध्यमों का विकास और हमारी दैनिक आवश्यकताओं को इस प्रकार के अस्थायी राष्ट्रीय हितों के संदर्भ में परखा जा सकता है। इस प्रकार से अन्दाजा लगाया जा सकता है कि भारतीय विदेश नीति में राष्ट्रीय हितों का सबसे बड़ा स्थान है। इस हेतु हम भारत एवं अरब के देशों के मामलों में भारत सहयोगी भावना देख सकते हैं यथा – ''भारत ने पश्चिमी एशिया के संकट में इजरायल के बजाय अरब राष्ट्रों का सदैव समर्थन किया है। गुट–निरपेक्ष होते हुए भी 9 अगस्त, 1971 को सोवियत संघ के साथ 20 वर्षीय संधि की।''[10] इसका मतलब यह नहीं है कि भारत किसी देश के साथ गुट न बना पाये। भारत ने 5 जून 1987 को मानवीय आधार पर श्रीलंका में जाफना की पीड़ित जनता के लिए हवाई मार्ग से राहत

सामग्री पहुँचायी। स्वतंत्रता के बाद के इतिहास में यह पहला अवसर था। जब भारत ने किसी देश की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का उल्लंघन कर राहत सामग्री पहुँचायी। भले भारत निस्त्रीकरण का प्रबल समर्थक रहा हो परन्तु भारत ने सन् 1998 में पोखरण में परमाणु परीक्षण किया हो इसका गलत यूज नहीं होगा ऐसा भारतीय लोगों का मानना है। वैसे भारत ने अप्रसार संधि (N.P.T) तथा व्यापक प्रतिबन्ध संधि (C.T.B.T.) पर हस्ताक्षर करने से साफ शब्दों में इन्कार कर दिया क्योंकि भारत का नाभिकीय विकल्प राष्ट्रीय सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण एवं बहुत उपयोगी अंग है। वैसे सभी देश चाहते हैं कि हमारे देश का चहुमुँखी विकास हो, चाहे वह आन्तरिक सुरक्षा व्यवस्था या चाहे बाहरी सुरक्षा व्यवस्था के प्रश्नों से जुड़ा हो अर्थात् आन्तरिक अंशाति, अव्यवस्था इस देश की विदेश नीति के निर्धारण तत्व राष्ट्रीय हित को अवश्य प्रभावित कर सकती है।

- **आर्थिक तत्व –** किसी देश की उन्नति का सर्व प्रमुख उसी अर्थव्यवस्था के ठीक क्रियान्वयन एवं सही लेखा–जोखा पर निर्भर करता है। भारत की विदेश नीति के निर्धारण में आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न देश की विदेश नीति अच्छी होगी क्योंकि जिस देश का आर्थिक विकास जितना अधिक हुआ है वहाँ पर गरीबी, भुखमरी, कुपोषण की कम मात्रा में समस्याएँ पायी जाती हैं। इस सदंर्भ में विद्वान रूसों ने कहा था कि – स्वस्थ्य शरीर में स्वस्थ्य मस्तिष्क का विकास होता है। ये सब कहने का अभिप्राय यही है कि आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न देश की विदेश नीति अच्छी होगी एवं अधिक देशों को अपनी ओर आकर्षित करने की क्षमता युक्त होगी। इस संदर्भ में उपर्युक्त कथन को देखा जा सकता है यथा – ''अन्तर्राष्ट्रीय शांति स्थापना में भारत की आर्थिक उन्नति का आधार स्तम्भ है। इस संदर्भ में जे. वदोपाध्याय ने अपनी पुस्तक ''दि मेंकिंग ऑफ इण्डियास फारेन पॉलिसी' में भारतीय विदेश नीति के आर्थिक आयाम बताये हैं जिसके तीन प्रमख सूचक हैं – सुरक्षा, विदेशी सहायता तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार।''[11] किसी भी देश की विदेश नीति के निर्धारण में अर्थ तंत्र के संसाधनों का काफी महत्वपूर्ण स्थान है, जैसे व्यापार, एक–दूसरे राज्यों अर्थात् देशों के साथ आपसी सहयोग की भावना इस दृष्टि से इसके निर्धारण में सहायक होते हैं।

### आन्तरिक शक्तियों और दबावों का प्रभाव

किसी भी देश की आन्तरिक शक्तियाँ और दबाव समूह भी विदेश नीति के निर्धारक तत्वों में अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। भारत की विदेश नीति में भारत की आन्तरिक प्रशासनिक व्यवस्था, सरकारी तंत्र की भूमिका, सरकार के प्रत्येक तीन अंगों की भूमिका, राजनीतिक पार्टियों के वरिष्ठतम नेताओं के व्यक्तित्व आदि के सन्तुलित व्यवहार से भी भारत की विदेश नीति निर्धारित होती है। वैसे शक्ति संतुलन में दबाव समूह की सकारात्मक भूमिका होती है। वास्तव में हम देखते हैं कि विदेश नीति निर्धारण में राष्ट्र की आन्तरिक शक्तियों का भी विशेष स्थान होता है। इसका पता हम निम्न पंक्तियों के माध्यम से आसानी से लगा सकते हैं – ''जब राष्ट्र आंतरिक दृष्टि से अधिक स्पष्ट सुदृढ़ और मनोवैज्ञानिक रूप में एकता के सूत्र में गुंथा होता है, तो राष्ट्र की विदेश नीति भी अधिक स्पष्ट; सुदृढ़ और प्रभावशाली होती है, परन्तु राष्ट्र आन्तरिक फूट (मतभेदों) के कारण विभक्त होता है और राजनीतिक अस्थिरता पायी जाती है तो विदेभ नीति प्रायः शिथिल और अन्तर्राष्ट्रीय विषय प्रायः निष्क्रिय और प्रभावहीन होती है।''[12] परन्तु उपर्युक्त संदर्भ भारतीय विदेश नीति को न के बराबर प्रभावित करता है क्योंकि भारतीय परिवेश में भी कुछ क्षेत्र विशेषों को छोड़कर विशेषतः आन्तरिक शांति का ही माहौल देखने को मिलता है। कहने का अभिप्राय यह है कि किसी क्षेत्रीय दबाव का प्रभाव बहुत हद तक प्रभावित नहीं करते हैं इसका पता हम इन प्रमुख बातों से लगा सकते हैं यथा – ''भारत की विदेश नीति भी इसका अपवाद नहीं है। आजादी के बाद लगभग 20 वर्षों तक भारत आर्थिक और सैनिक दृष्टि से कमजोर होने के बाद भी विश्व राजनीति में आर्थिक योगदान दे सका। भारत की आन्तरिक शक्तियों और दबावों का प्रभाव सुदृढ़ व शक्तिशाली था।''[13] लगभग 90वें दशक में अनेक नेताओं के

भ्रष्टाचार में लिप्त रहने पर आन्तरिक अशांति को बढ़ाने में काफी योगदान दिया है इसका पता हम इन पंक्तियों से स्पष्टतय लगा सकते हैं – ''दुर्बल सरकारों के नेता होने के कारण श्री वी.पी.सिंह (नवम्बर, 1989 से मई, 1991) की विदेश नीति की ढुलमुल और अस्पष्ट रही है। खाड़ी संकट के समय तो ऐसा लगा मानो भारत की कोई विदेश नीति ही नहीं है।''[14] कहने का तात्पर्य यही है कि आन्तरिक अशांति कहीं न कहीं विदेश नीति को बहुत हद तक प्रभावित करती है। हमारे घर के परिवेश को ले सकते हैं, जिस घर में कोई थोड़ी सी मन–मुटाव हो तो वह सारे परिवार के वातावरण को दूषित कर सकती है। इसलिए हमारे देश की आन्तरिक सुरक्षा, व्यवस्था, शांति की भावना विदेश नीति निर्धारण में अपनी अहम् भूमिका अदा करती है। वैसे भारत को एक संभावित आर्थिक शक्ति के रूप में अपने को प्रोजेक्ट करना चाहिए और उसी के अनुरूप नीति यंत्रों व रणनीतियों को निर्माण करना चाहिए। इसके लिए भारत को अपनी आर्थिक राजनय के उपागम में बदलाव लाना होगा। विश्व आर्थिक व व्यापारिक प्रतिद्वन्द्विता के माहौल में अपने व्यापार समुदाय को प्रोत्साहन देना चाहिए ताकि वे गुणवत्ता को कायम रखते हुए विश्व बाजार में भारत के मान को लोकप्रिय बना सकें, जिस तरह चीन में अपने लघु व मध्यम उद्योग को विशेष प्रोत्साहन देकर अपना निर्यात व्यापार कई विलियन डॉलर प्रतिवर्ष कर दिया है, जबकि भारत के व्यापार निर्यात के क्षेत्र में दिनोंदिन गिरावट आ रही हैं। यह चिंतनीय है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि किसी देश की विदेश नीति के निर्धारण में उस देश की भौगोलिक स्थिति, ऐतिहासिक परम्परा, सैनिक शक्ति, आन्तरिक शांति–व्यवस्था एवं दबाव समूह, आर्थिक तत्व, राष्ट्रीय हित की भावना, विभिन्न विचारधाराओं का प्रभाव, पं. नेहरू का व्यक्तित्व, राजनेताओं अर्थात् भारतीय नेताओं का व्यक्तित्व एवं व्यवहार आदि तत्व हैं जो विदेश नीति के निर्धारण के रूप में अपनी अहम् भूमिका निभाते हैं। भारत की विदेश नीति को तराशने के तत्वों या कारकों को शामिल किया जा सकता जो अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अखाड़े में भारत के चाल–चलन को संचालित करते हैं। ये निम्न हैं – भारत के पारम्परिक और दार्शनिक आधार जो मूल्यों और अन्य देशों के साथ अन्तर्राष्ट्रीय शांति, सह–अस्तित्व और मित्रता की नैतिकता को दर्शाता हैं। उसका भूगोल जो अब तक के सबसे महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक है जो न केवल भारत के भौगोलिक भू–भाग की ओर बल्कि ग्लोब में उसकी स्थिति की ओर भी इशारा करता है। राष्ट्रीय हित में वे तत्व आते हैं जिसमें भारत अपना हित समझता है। चाहे वह सुरक्षा की दृष्टि से हो, आर्थिक दृष्टि से हो या एक तीसरी दुनिया के मसीहा के रूप में हो। मूलरूप से गतिशील अन्तर्राष्ट्रीय माहौल की ओर इशारा करने वाला अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश जो निश्चित रूप से भारत की विदेश नीति के निर्माण को प्रभावित करेगा।

***निदेशक**
**आदिवासी अध्ययन केन्द्र,**
**जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय (जोधपुर)**
***शोधार्थी**
**राजनीति विज्ञान विभाग**
**जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय (जोधपुर)**

**संदर्भ सूची**

1. डॉ. बी. एल. फड़िया, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा – 2001, पृ.सं. 270
2. उपरोक्त, पृ.सं. 270

3. डॉ. बी. एल. फड़िया, अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, राजस्थान हिंदी ग्रन्थागार, जयपुर, 2013, पृ.सं. 255
4. डी. एस. यादव, भारतीय राजनीति का अन्य देशों पर प्रभाव, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 2011, पृ. सं. 11
5. डॉ. बी. एल. फड़िया, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, पूर्वोक्त, पृ.सं. 272/273
6. उपरोक्त,पृ.सं. 272
7. उपरोक्त,पृ.सं. 272
8. उपरोक्त,पृ.सं. 272
9. डॉ. एस यादव, पूर्वोक्त, पृ. 13
10. डॉ. बी. एल. फड़िया, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, पूर्वोक्त, पृ.सं. 272
11. डॉ. एस यादव, पूर्वोक्त,, पृ. 13
12. डॉ. बी. एल. फड़िया, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, पूर्वोक्त, पृ.सं. 273
13. उपरोक्त, पृ. संख्या 273
14. उपरोक्त, पृ. संख्या 273